हिन्दी : गांधी जी के भाषायी स्वराज का प्रश्न

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र

हिन्दी भारत भूमि की सर्वाधिक बोली, पढ़ी और समझी जाने वाली भाषा है। यह दुनिया में सर्वाधिक बोली जाने वाली पाँच वैभवशाली भाषाओं में गिनी जाती है। कहते हैं, भाषा हमारे भावों और विचारों की वाहिनी होती है। इसके जरिये हम अपने विचारों एवं अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हैं। भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची के अनुसार वर्तमान में कुल 22 भाषाओं को स्वीकृति प्रदान की गयी है। ये हैं- असमी, बंगला, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयाली, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगू, उर्दू, सिंधी, बोडो, डोगरी, कोंकणी, मैथिली, मणिपुरी, संथाली तथा नेपाली। संविधान सभा ने 14 सितम्बर 1949 को खड़ी बोली में देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली भाषा हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया। वह भारत गणराज्य के कामकाज की भाषा बनी। तब यह तय किया गया था कि हिन्दी का प्रचार-प्रसार, सामासिकता तथा इसकी सर्वस्वीकार्यता के लिए प्रयास किए जाएंगे, जिससे वह राष्ट्रभाषा का दर्जा हासिल कर सके। उस समय सहूलियत को ध्यान में रखते हुए अगले 15 वर्षों तक सरकारी कामकाज की भाषा के रूप में अंग्रेजी को समान्तर कायम रखने का प्रावधान किया गया। लेकिन उसके बाद समय-समय पर राष्ट्रपति के अध्यादेशों के अनुसार अंग्रेजी को बार-बार विस्तार मिलता गया। फलस्वरूप हिन्दी की अनिवार्यता तथा उसके सशक्तिकरण पर ज्यादा यथोचित जोर नहीं दिया गया। इससे शासन के स्तर पर हिन्दी को लेकर खानापूर्ति शुरू की गयी। नतीजा हमारे सामने है, कि हिन्दी को वह स्थान आज तक नहीं मिल सका जो उसे आजादी के समय ही मिल जाना चाहिए था। वह आज भी राष्ट्रभाषा बनने की बाट जोह रही है।

भाषायी स्वराज का इंतजार !

राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का प्रश्न भाषायी स्वराज का प्रश्न है। इस सच्चाई को गांधी जी के उस कथन में देखा जा सकता है- 'अगर स्वराज अंग्रेजी बोलने वाले भारतीयों का, और उन्हीं के लिए होने वाला है, तो बेशक अँग्रेजी ही राष्ट्रभाषा होगी। लेकिन अगर स्वराज देश के करोड़ों भूखों, निरक्षर भाई-बहनों और दलितों तथा वंचितों का हो, और इन सबके लिए होने वाला हो, तो हिंदी ही एकमात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है।' विश्व के

आर्थिक उदारीकरण तथा बाजारवाद के चलते भारतीय भाषाएं कथित तौर पर संरचनात्मक रूप से कमजोर हुई हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने वित्त, वाणिज्य, व्यापार, विनिमय, सब में अंग्रेजी को और मजबूती से स्थापित करने में भूमिका निभायी है। अंग्रेजी का प्रभुत्व तथा प्रभाव बढ़ा है, और हिन्दी सहित भारतीय भाषाओं की स्थिति कमजोर हुई है। एक समय तो राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने अपनी सिफारिश में कहा था कि देश भर में बच्चों को पहली कक्षा से अंग्रेजी पढ़ाई जाए।

प्राय: सभी देशों ने अपने ही देश की भाषा को शिक्षा-दीक्षा के लिए स्वीकार किया। यूरोप के स्विट्जरलैंड सरीखे नन्हें से देश ने भी अपनी भाषा को अपने यहाँ शिक्षा का माध्यम बनाया है। भारत में अंग्रेजी को बढ़ावा देने के पीछे ईस्ट इण्डिया कंपनी का राज रहा है। अठारहवीं सदी के अंत तक भारत में अँग्रेजी राज को कायम रखने के लिए बड़ी संख्या में कर्मचारियों और बाबुओं की आवश्यकता महसूस की गई। अधिकारियों के स्तर पर तो अँग्रेजों की ही नियुक्ति होती थी, मगर निचले स्तर पर इतनी बड़ी संख्या में अँग्रेजों की नियुक्ति संभव नहीं थी। इस मजबूरी में स्थानीय लोगों को अँग्रेजी में शिक्षित करने के बारे में सोचा गया। लार्ड मैकाले ने इस विचार को आगे बढ़ाया, क्योंकि उसने हिन्दुस्तानियों को सदा-सर्वदा के लिए मानसिक गुलाम बनाना चाहा था। वह भारतीयों के बीच से ही एक ऐसी नस्ल पैदा करना चाहता था जो तन से हिन्दुस्तानी होगी, लेकिन मन से अंग्रेज। मैकाले का मकसद भारत में ऐसी शिक्षा-व्यवस्था कायम करना था जिससे भारतीय जीवन-शैली और लोक-संस्कृति का पश्चिमीकरण हो जाए। और उसमें वह सफल भी रहा।

राष्ट्रभाषा - एक चिरलंबित प्रश्न

कहते हैं, राष्ट्रभाषा के बिना कोई भी राष्ट्र गूंगा है। राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र की कल्पना भी नहीं की जा सकती। आजादी के पहले से लेकर आज तक देश के सभी राष्ट्रनायकों तथा महापुरुषों ने भारत के लिए राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी की वकालत की है। लेकिन अफसोस कि हिन्दी को उसका वाजिब हक आज तक नहीं मिल सका है। धीरे-धीरे लोग हिन्दी के इस प्रश्न से दूर हो रहे हैं, तथा यथास्थिति को जैसे स्वीकार कर ले रहे हैं। कहा जाता है कि लोगों में स्वभाषा के प्रति अनुराग कम होता जा रहा है। हिन्दी को लेकर जातीय चेतना का ह्रास दीखता है। विचारकों का मानना है कि हिन्दी प्रदेशों के जनमानस में भाषायी चेतना का अभाव है। आखिर ऐसे कितने लोग हैं जो हिन्दी को 'अपनी भाषा' मानते हैं तथा उसमें गर्वानुभूति करते हैं। उत्तर तथा मध्य भारत में कई प्रांतों की बोर्ड की परीक्षाओं में हर साल बड़ी संख्या में छात्रों का हिन्दी विषय

में अनुत्तीर्ण होना यह साबित करता है कि हिन्दी की पढ़ाई-लिखाई का स्तर कहां पहुंच गया है। हिन्दी प्रदेशों के छात्रों के लिए अब हिन्दी भाषा गौण होती जा रही है। वे उसे सिर्फ इम्तहान के समय थोड़ा-बहुत पढ़कर पास हो जाना चाहते हैं। उन्हें हिन्दी के लेखकों, कवियों, उनकी कृतियों तथा साहित्यिक अवदानों से बहुत ज्यादा लेना-देना नहीं है। इन सबके गहरे सामाजिक, समाजवैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक कारण हैं। यहां इन सबका उल्लेख करना संभव नहीं है।

मातृतुल्य है भाषा

महात्मा गांधी को एक सम्मेलन हेतु भेजे गये पत्र में महामना पंडित मदनमोहन मालवीय जी ने कहा था कि

'भाषा माता के समान है। माता पर हमारा जो प्रेम होना चाहिए, वह हम लोगों में नहीं है। हमें अब अपनी मातृभाषा की और उपेक्षा करके उसकी हत्या नहीं करना चाहिए।' जैसा कि हम जानते हैं, गांधी जी राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को स्थापित करने के प्रबल समर्थक थे। इस रूप में अँग्रेजी से उनका जबर्दश्त विरोध भी था। वे कभी नहीं चाहते थे कि देश को हम अँग्रेजों से तो आजाद करा लें, लेकिन अँग्रेजी के आगे नतमस्तक होते रहें। इसका कारण एकदम सीधा था। अँग्रेजी प्रभु वर्ग की भाषा थी। इतने साल बाद आज भी उसका वही अभिजात्य चरित्र कायम है। महात्मा गांधी जी ने सन् 1914 में दक्षिण अफीका से भारत लौटने पर पुरुषोत्तम दास टंडन को एक पत्र में लिखा था, 'मेरे लिए हिन्दी का प्रश्न तो स्वराज का प्रश्न है।' इसके बाद गांधी जी ने दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार सभा के द्वारा हिन्दीतर भाषी प्रांतों में राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार-प्रसार कराया। गांधी जी समझते थे कि पूरे देश की जनता को अँग्रेजी सिखा पाना न तो संभव होगा और न उचित। ऐसे में देश में कभी भी असली स्वराज नहीं आ सकता।

भारत की जनभाषा है हिन्दी

हिन्दी सही मायने में भारत की जनभाषा है। वह एक मजबूत संपर्क भाषा है। वह कोटि-कोटि जनों की भाषा है, चाहे वे किसी भी पंथ, मजहब या संप्रदाय के हों। हिन्दी प्रायः उत्तर-मध्य भारत के सभी राज्यों में बखूबी पढ़ी, लिखी, बोली तथा खूब समझी जाती रही है। लेकिन जब हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने की बात चल रही थी, तो कुछ लोगों ने हिन्दी का इसलिए विरोध किया क्योंकि उन्हें लगा कि इससे दूसरी प्रांतीय भाषाओं का नुकसान होगा। जब कि राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी की परिकल्पना इस रूप में ही की गई थी कि अपने-अपने राज्यों में प्रांतीय भाषाएँ ही अपने पूरे अधिकार के साथ अपनी-अपनी भूमिकाएँ निभाएँगी। जो भूमिका हिंदी की हिंदीभाषी राज्यों में होगी, वहीं भूमिका हिंदीतर प्रांतों में उनकी अपनी-अपनी भाषाओं की होगी। राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी अपने ही इतर भाषाओं के साथ उनका तालमेल बनाने में सहायक होगी। जहाँ उनका अधिकार होगा, वहाँ तो हिंदी का कोई दखल होगा ही नहीं। लेकिन दुर्भाग्यवश निहित स्वार्थी तत्वों की संकुचित सोच के चलते हिन्दी पर राजनीति की गयी, तथा उसके बारे में खूब दुष्प्रचार किया गया। ऐसे ही कुछ लोगों ने अंग्रेजी को सीने से चिपका कर रखा। उन्हें अंग्रेजी पर आपत्ति नहीं थी, लेकिन हिन्दी से धुर विरोध था। आज वही अँग्रेजी भाषा, हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के हितों पर कुठाराघात कर रही है। हिन्दी को लेकर देश में यह विडम्बनापूर्ण स्थिति है।

लोक की भाषा और सरकारी हिन्दी

आज की हिन्दी का भाषायी विकास पिछले दो सौ वर्षों के दौरान हुआ है। यह खास करके स्वतंत्रता आंदोलन का दौर था। हिन्दी से लोगों को बड़ी-बड़ी आशाएं तथा अपेक्षाएं थीं। उनमें से सबसे बड़ी आकांक्षा एक ऐसे लोकतांत्रिक समाज के निर्माण और विकास की आकांक्षा थी, जिसकी भाषा हिन्दी हो। इसका आशय यह है कि हिन्दी को एक बड़े लोकतांत्रिक समाज की जिंदगी, सोच-विचार और रचनाशीलता की भाषा के रूप में विकसित होना था। इसके लिए यह भी जरूरी था कि व्यापक हिन्दी क्षेत्र के भीतर विभिन्न क्षेत्रों की जो मातृभाषाएं हैं, उनसे हिन्दी का निकट का संबंध हो। हिन्दी भाषा तभी पढ़े-लिखे लोगों के साथ-साथ किसान, मजदूर, खेतिहरों तथा श्रमिकों की जिंदगी की भाषा बन सकती है। यह एक विडंबना है कि जो खड़ी बोली हिन्दी, आजादी के बाद सरकारी तंत्र के जरिये विकसित हुई, वह धीरे-धीरे हिन्दी क्षेत्र की लोकभाषाओं से दूर होती गयी। इसलिए आज भी भारत के दूर-दराज के गांवों तथा कस्बों के लोग शासन, प्रशासन की हिन्दी को अजनबीपन की नजर से देखते हैं। दफ्तरों की पत्रावली की हिन्दी से वे लोग वैसा अपनापन अनुभव नहीं करते जैसा उन्हें अपनी मातृभाषाओं या बोलियों से है।

तकनीकी शिक्षा और हिन्दी

विगत तीन दशकों से शुरू आर्थिक उदारीकरण तथा बाजारवाद के चलते भारतीय भाषाएं कथित तौर पर संरचनात्मक रूप से कमजोर हुई हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने वित्त, वाणिज्य, व्यापार, विनिमय, सब में अंग्रेजी को और

मजबूती से स्थापित करने में भूमिका निभायी है। अंग्रेजी का प्रभुत्व तथा प्रभाव बढ़ा है, और हिन्दी सहित भारतीय भाषाओं की स्थिति कमजोर हुई है। एक समय तो राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने अपनी सिफारिश में कहा था कि देश भर में बच्चों को पहली कक्षा से अंग्रेजी पढ़ाई जाए। दुनिया के सभी शिक्षाशास्त्रियों ने बुनियादी शिक्षा के लिए मातृभाषा की वकालत की है। लेकिन हमारे देश में आंग्ल भाषा के मोह के चलते यह सर्वमान्य तथ्य को भी नकारने की बात हो रही है। ऐसे में देश के बच्चे अपनी भाषा कब पढ़ेंगे। आज की उच्च शिक्षा तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रम अंग्रेजी में ही हैं। विज्ञान, तकनीकी, अभियांत्रिकी, चिकित्सा, पराचिकित्सा, प्रबन्धन, वित्त, वाणिज्य, सभी के पाठ्यक्रम अंग्रेजी में हैं। भाषाओं को छोड़ दें तो करीब-करीब सभी विषयों के शोध एवं विकास का काम अंग्रेजी में चल रहा है। देश को आजाद हुए 75 साल बीत चुके हैं। लेकिन हम अभी तक अपने लिए उच्च शिक्षा का माध्यम अपनी किसी भाषा को नहीं बना सके। यह औपनिवेशिक बोझ को लगातार ढोते जाने जैसा है। इधर एक सुखद बात यह हुई है कि डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में गठित शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट में प्राथमिक शिक्षा को मातृभाषा में दिए जाने की संस्तुति की है, तथा तकनीकी शिक्षा के लिए भारतीय भाषाओं को तरजीह देने की बात कही है। मध्य प्रदेश सरकार ने पहले करते हुए अपने यहां चिकित्सा की पढ़ाई हिन्दी में शुरू कर दी है। उसने आठ महीने के श्रम से एम.बी.बी.एस. के प्रथम वर्ष के कोर्स की किताबें हिन्दी में ला दी हैं। इसके लिए मेडिकल शिक्षकों तथा विशेषज्ञों की टीम लगी हुई थी। उत्तर प्रदेश सरकार ने भी अगले सत्र से मेडिकल की पढ़ाई हिन्दी में करने की बात की है। महाराष्ट्र सरकार ने मराठी में मेडिकल शिक्षा देने का संकल्प किया है। दक्षिण भारत के राज्यों ने भी निज भाषा में व्यावसायिक पाठ्यक्रम शुरू करने की पहल की है। इस तरह बहुत देर से ही सही, हिन्दी सहित भारतीय भाषाओं के लिए द्वार अब खुलना शुरू हो रहे हैं।

प्राय: ऐसा कहा जाता है कि हिन्दी में मौलिक तथा नवीन चिंतन, ज्ञान-विज्ञान से संबंधित नवाचार का काम बहुत कम हो रहा है। हो सकता है इसमें सत्यांश हो, लेकिन यह पूर्ण सत्य भी नहीं है। हाँ, अंग्रेजी का वर्चस्व कायम है। वही सबसे बड़ी बाधा भी है। यह एक यथार्थ है कि आज अंग्रेजी के प्रभुत्व के सामने सभी भारतीय भाषाएं अपने को कमजोर पा रही हैं। हिन्दी के पक्ष में एक मजबूत बात है देश में हिन्दी जानने, समझने तथा बोलने वालों की विशाल आबादी है, तथा साथ में है हिन्दी प्रदेशों का विराट भूभाग। इसके अलावा भारतवर्ष के बाहर मॉरीशस, सूरीनाम, ट्रिनिदाद, नेपाल, बर्मा, भूटान, थाईलैंड, दक्षिण अफीका, इंडोनेशिया, सिंगापुर, फीजी, तथा यूरोप के तमाम देशों हिन्दी के प्रति संकल्पित लाखों-लाख प्रवासी भारतीय हैं। उन जगहों की की संपर्क भाषा में हिन्दी को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। एशिया, यूरोप, तथा अटलांटिक तक फैले ये प्रवासी भारतीय हिन्दी के प्रचार-प्रसार तथा संवर्धन में अमूल्य योगदान दे रहे हैं। दुनिया के करीब 180 विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जा रही है। प्रवासी हिन्दी साहित्य आज बहुत समृद्ध है, तथा हिन्दी को वैश्विक बनाने में अभूतपूर्व भूमिका निभा रहा है। हमें प्रयास करना होगा कि वर्ष 2047 में जब भारत अपनी आजादी का शताब्दी वर्ष मना रहा होगा, तब तक हिन्दी उच्च-शिक्षा, अनुसंधान, तकनीकी, विधि, चिकित्सा, सहित सभी क्षेत्रों में पूर्णत: स्थापित हो जाए। साथ ही यह देश के कोटि-कोटि जनों की आशाओं, तथा आकांक्षाओं की पूर्णता होगी। साथ ही गांधी जी का भाषायी स्वराज का सपना भी साकार हो जाएगा।

संपर्क:
वैज्ञानिक,
होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र
टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान
मुंबई-400088